एग्री मैगज़ीन
(कृषि लेखों के लिए अंतरराष्ट्रीय ई-पत्रिका)
वर्ष: 02, अंक: 04 (अप्रैल, 2025)
www.agrimagazine.in पर ऑनलाइन उपलब्ध
© एग्री मैगज़ीन, आई. एस. एस. एन.: 3048-8656

औषधिय गुणों से भरपूर ग्वारपाठा की खेती: एक दृष्टि

*मेघराज मीणा[1], राम नारायण कुम्हार[1], राधिका मीणा[1], सत्यनारायण रेगर[2] एवं धर्मेंद्र मीना[3]
[1]महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान, भारत
[2]कृषि विश्वविद्यालय, कोटा, राजस्थान, भारत
[3]कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान, भारत
*संवादी लेखक का ईमेल पता: meghrajsknau@gmail.com

ग्वारपाठा, घृतकुमारी या एलोवेरा जिसका वानस्पतिक नाम *एलोवेरा बारबन्डसिस* हैं तथा लिलिऐसी परिवार का सदस्य है। इसका उत्पत्ति स्थान उत्तरी अफ्रीका माना जाता है। एलोवेरा में कई औषधीय गुण पाये जाते हैं, जो विभिन्न प्रकार की बीमारियों के उपचार में आयुर्वेदिक एंव युनानी पद्धति में प्रयोग किया जाता है जैसे पेट के कीड़ों, पेट दर्द, वात विकार, चर्म रोग, जलने पर, नेत्र रोग, चेहरे की चमक बढ़ाने वाली त्वचा क्रीम, शेम्पू एवं सौन्दर्य प्रसाधन तथा सामान्य शक्तिवर्धक टॉनिक के रूप में उपयोगी है। इसके औषधीय गुणों के कारण इसे बगीचों में तथा घर के आस पास लगाया जाता है। पहले इस पौधे का उत्पादन व्यावसायिक रूप से नहीं किया जाता था तथा यह खेतों की मेढ़ में नदी किनारे अपने आप ही उग जाता है। परन्तु अब इसकी बढ़ती मांग के कारण कृषक व्यावसायिक रूप से इसकी खेती को अपना रहे हैं, तथा समुचित लाभ प्राप्त कर रहे हैं। एलोवेरा के पौधे की सामान्य उंचाई 60–90 सेमी. होती है। इसके पत्तों की लंबाई 30–45 सेमी. तथा चौड़ाई 2.5 से 7.5 सेमी. और मोटाई 1.25 सेमी. के लगभग होती है। एलोवेरा में जड़ के ऊपर जो तना होता है उसके उपर से पत्ते निकलते हैं, शुरूआत में पत्ते सफेद रंग के होते हैं। एलोवेरा के पत्ते आगे से नुकीले एवं किनारों पर कटीले होते हैं। पौधे के बीचो बीच एक दण्ड पर लाल पुष्प लगते हैं। हमारे देश में कई स्थानों पर एलोवेरा की अलग– अलग प्रजातियां पाई जाती हैं। जिसका उपयोग कई प्रकार के रोगों के उपचार के लिये किया जाता है।

इसकी खेती से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए किसान भाई निम्न बातें ध्यान में रखे :-

जलवायु एवं मृदा: यह उष्ण तथा समशीतोष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। कम वर्षा तथा अधिक तापमान वाले क्षेत्रों में भी इसकी खेती की जा सकती है। इसकी खेती किसी भी प्रकार की भूमि में की जा सकती है। इसे चट्टानी, पथरीली, रेतीली भूमि में भी उगाया जा सकता है, किन्तु जलमग्न भूमि में नहीं उगाया जा सकता है। बलुई दोमट भूमि जिसका पी.एच. मान 6.5 से 8.0 के मध्य हो तथा उचित जल निकास की व्यवस्था हो उपयुक्त होती है।

खेत की तैयारी: ग्रीष्मकाल में अच्छी तरह से खेत को तैयार करके जल निकास की नालियां बना लेना चाहिये तथा वर्षा ऋतु में उपयुक्त नमी की अवस्था में इसके पौधें को 50 – 50 सेमी. की दूरी पर मेढ़ अथवा समतल खेत में लगाया जाता है। कम उर्वर भूमि में पौधों के बीच की दूरी को 40 सेमी. रख सकते हैं। जिससे प्रति हेक्टेयर पौधों की संख्या लगभग 40,000 से 50,000 की आवश्यकता होती है। सामान्यतया रोपाई जून–जुलाई माह में की जाती है। परन्तु सिंचित क्षेत्रो में इसकी रोपाई फरवरी में भी की जा सकती है।

प्रवर्धन विधि एवं रोपाई: इसका प्रवर्धन वानस्पतिक विधि से होता है। व्यस्क पौधों के बगल से निकलने वाले चार पांच पत्तियों युक्त छोटे पौधे उपयुक्त होते हैं, प्रारंभ में ये पौधे सफेद रंग के होते हैं, तथा बड़े होने पर हरे रंग के हो जाते हैं। इन स्टोलन/सर्कस को मातृ पौधे से अलग करके नर्सरी या सीधे खेत में रोपित करते हैं।

निराई–गुडाई: प्रारंभिक अवस्था में इसकी बढ़वार की गति धीमी होती है। अतरू प्रारंभिक तीन माह तक में 2–3 निंदाई गुड़ाई की आवश्यकता होती है। क्योंकि इस काल मे विभिन्न खरपतवार तेजी से वृद्धि कर ऐलोवेरा की वृद्धि एवं विकास पर विपरीत असर डालते हैं। 8 माह के बाद पौधे पर मिट्टी चढ़ाएं जिससे वे गिरे नहीं ।

खाद एवं उर्वरक: सामान्यतया एलोवेरा की फसल को विशेष खाद अथवा उर्वरक की आवश्यकता नहीं होती है। परन्तु अच्छी बढ़वार एवं उपज के लिए 10–15 टन अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद को अंतिम जुताई के समय खेत में डालकर मिला देना चाहिए । इसके अलावा 50 किग्रा. नत्रजन, 25 किग्रा. फास्फोरस एवं 25 किग्रा. पोटाश तत्व देना चाहिये । जिसमे से नत्रजन की आधी मात्रा एवं फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी रोपाई के समय तथा शेष नत्रजन की मात्रा 2 माह पश्चात् दो भागों में देना चाहिए अथवा नत्रजन की शेष मात्रा को दो बार छिड़काव भी कर सकते हैं।

सिंचाई: एलोवेरा असिंचित दशा में उगाया जा सकता है। परन्तु सिंचित अवस्था में उपज में काफी वृद्धि होती है। ग्रीष्मकाल में 20–25 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करना उचित रहता है। सिंचाई जल की बचत करके एवं अधिक उपयोग करने के लिये स्प्रिंकलर या ड्रिप विधि का उपयोग कर सकते हैं।

पौध संरक्षण: इस फसल में साधारणतया कोई कीड़े अथवा रोग का प्रकोप नहीं होता है। परन्तु भूमिगत तनों व जड़ों को ग्रब नुकसान पहुंचाते हैं। जिसकी रोकथाम के लिये 60–70 किलोग्राम नीम की खली प्रति हेक्टर के अनुसार दें अथवा 20–25 किग्रा. क्लोरोपायरीफॉस डस्ट या फोरेट 10 G प्रति हेक्टर का भुरकाव करें । वर्षा ऋतु में तनों एवं पत्तियों पर सडन एवं धब्बे पाये जाते हैं, जो फफूंदजनित रोग है। जिसके उपचार के लिये मेन्कोजेब 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना उपयुक्त रहता है।

अंतरवर्तीय फसल: एलोवेरा की खेती अन्य फल वृक्ष औषधीय वृक्ष या वन में रोपित पेड़ों के बीच में सफलतापूर्वक की जा सकती है।

कटाई एवं उपज: फसल की रोपाई के बाद एक वर्ष के बाद पत्तियां काटने लायक हो जाती है। इसके बाद दो माह के अन्तराल से परिपक्व पत्तियों को काटते रहना चाहिए। सिंचित क्षेत्र मे प्रथम वर्ष में 35–40 टन प्रति हेक्टर उत्पादन होता है। तथा द्वितीय वर्ष में उत्पादन 10–15 फीसदी तक बढ़ जाता है। उचित देखरेख एवं समुचित पोषक प्रबंधन के आधार पर इससे लगातार तीन वर्षों तक उपज ली जा सकती है । असिंचित अवस्था में लगभग 20 टन प्रति हेक्टर उत्पादन मिल जाता है।